(गोरख पाँडेय की कविता)

ख़बरदार

ख़बरदार, खतरा है
यहां उसे वही कहना जो वह है।

आओ
बग़ैर शर्मिंदा हुए इस महानाटक में
शामिल हो जाएं
और अलग–अलग दुकानों पर बिक रहे
इस सर्वव्यापी झूठ को सच्चाई के साथ दुहराएं
सफ़ेद को स्याह करें, कहें
भुखमरी को भ्रूण–हत्या से कतराती नाजायज़ भीड़ की
पैदावार
महान और गुलाम देश को
पचाती हुई सड़ियल तोंद
तोंद नहीं समाजवाद है

वे अहिंसक कहे जाएं
जो पराए कंधों पर रखकर बंदूक चलाते हैं
जुलूसों के निहत्थे गुस्से पर
बारूद और नारों की बारिश करते हुए
दिल्ली की ओर उड़ जाते हैं
जाहिर है कि यह बाज़ार है
योजनाबद्ध बसा हुआ काला बाज़ार
यहां नमक से ले कर आदमकद आदमी तक बिकाऊ है
कहें इसे लोकतंत्र ज़ोर देकर
महात्मा के बंदरों ने सिखाया है–
बंद रक्खें आंखें
उंगलियां डाल लें कानों में
होंठ सी लें
डरावनी हो चली हैं चीख़ें, ख़बरे, आवाज़ें,
बचे रहने के लिए सुअरों की तरह
उलट लें अपनी–अपनी जुबान
चुपचाप
चुपचाप हो जाएं
सो जाएं
आराम और शिकस्त ओढ कर
अल्लाहो–ईश्वर की चीख से खाली पेट भरें
एक–दूसरे का गला घोंट धर्म करें
अथवा उनकी आत्मा की शांति के लिए
जिन्होंने दी हमें मुर्दा उपाधियों की परंपरा
उपाधियां बांटे–
तरतीब से आदमखोर को अन्नदाता
घड़ियाल को नेता
भेड़िए को समझदार
अंधे कुएं को बहती नदी
ईमान को बेवकूफी
धोखे को प्यार

ख़बरदार, ख़तरा है
यहां उसे वही कहना
जो वह है।

पेज 1 का शेष

लूट, झूठ और पैराशूट

अगर इन चुनावों से वास्तव में कुछ बदलाव होना होता तो तमाम पार्टियों को लूट, झूठ और पैराशूट के सहारों की जरूरत न पड़ती। भाजपा अपने प्रधानमंत्री पद के उम्मीदवार मोदी को उसके असली चेहरे में पेश करती। उनके विज्ञापनों में मोदी की छवि मुसलमान-विरोधी और कार्पोरेट दलाल की दिखाई जाती। इसी तरह कांग्रेस अपने नेताओं का असली चेहरा सामने रख कर वोट मांगने निकले तो उसे हरियाणा के मुख्यमंत्री भूपेन्द्रसिंह हुड्डा को कुशल प्रॉपर्टी डीलर और महाराष्ट्र के मुख्य-मन्त्रियों को विदर्भ के किसानों की रिकॉर्ड आत्म हत्याओं का जिम्मेदार ठहराना होगा ऐसे ही विज्ञापन तमाम अन्य राष्ट्रीय व क्षेत्रीय क्षत्रपों को भी देने चाहिये होंगे।

वैसे मतदाताओं को इन विज्ञापनों की दरकार होना जरूरी नहीं। अपने अनुभव व समझ के बूते पर वह हर राजनीतिक पार्टी व उसके उम्मीदवारों के चरित्र को समझता है। उसे पता है कि मोदी की हवा में कितनी हवाबाज़ी है। वह जानता है कि कांग्रेस के युवराज ने गद्दी पर बैठ कर किन मुनाफ़ाखोरों का भला करना है। उसे मुलायम सिंहों, मायावतियों, जयललिताओं, यदियुरप्पाओं, लालू यादवों, नितीश कुमारों, बादलों, चौटालों इत्यादि-इत्यादि से जनहित में काम करने की कोई उम्मीद नहीं है।

अगर विज्ञापन में पैराशूट का आविष्कार न हुआ होता तो तय है कि राजनीतिकों ने इसे निश्चित ही ढूंढ लिया होता अन्यथा, 'प्राइमरी' के रास्ते से उम्मीदवार चुनने की बात करने वाली पार्टी 'आप' को गुलपनाग जैसे दर्जनों उम्मीदवार चुनाव में न उतारने पड़ते। यदि अर्थव्यवस्था में कालाधन की दखलंदाज़ी न होती तो भी राजनीतिक व्यवस्था ने कालेधन जैसी अमूल्य निधि को खोज निकाला होता। सत्ता से दूरी की हताशा ने हरियाणा के अनुभवी राजनीतिक वीरेन्द्र सिंह से सच कहलवा लिया कि राज्य सभा की एक सीट 100 करोड़ में पड़ती है।

मीडिया में नेताओं के रूठने की कहानियां खूब स्थान पर रही हैं। इसी के उन आंकड़ों को भी प्रमुखता दी जाती है जो वोटरों की बढती संख्या या वोटरों के बढते प्रतिशत को उजागर करते हैं। यह मीडिया की सच्चाई है। मतदाता की सच्चाई क्या है? अगर कहीं वह रूठ गया तो लूट और झूठ पर आधारित इस चुनाव व्यवस्था का क्या होगा?

चोर का साथी भी चोर होता है!

इस क्रम में एक और सम्मानित नाम जुड़ गया है। गुजरात के 'कसाई' नरेंद्र मोदी को न समाज और न ही इतिहास क्लीन चिट देने जा रहा है। यहाँ तक कि 2002 के साम्प्रदायिक तांडव से जुड़े तमाम मामले अभी अदालतों में चल रहे हैं और मोदी के कई राजनीतिक और प्रशासनिक साथी मुस्लिम नरसंहार व प्रायोजित पुलिस-हत्याओं के आरोपों में जेलों में सजाएं काट रहे हैं। ऐसे में मोदी को क्लीन चिट देनेवाले बुद्धिजीवियों की कतार में भाजपा के नए-नए मुल्ला एम जे अकबर भी शामिल हो गए हैं। जाहिर है, मोदी के बढ़ते राजनीतिक वर्चस्व से फायदा उठाने की नीयत से ही वे मोदी के घोर साम्प्रदायिक चेहरे पर अपनी सेकुलर आभा बिखेरने में जुटे नजर आने जा रहे हैं।

कभी जवाहरलाल नेहरू जैसे सेकुलर राजनीतिज्ञ को आदर्श माननेवाले अकबर को देश-विदेश में दशकों से उनके शोध-आधारित एवं तथ्यपरक गंभीर लेखन के लिए जाना जाता है। चंद महीने पहले तक भी वे राहुल गांधी की अपरिपक्वता और नरेंद्र मोदी की साम्प्रदायिकता के सन्दर्भ में, उन दोनों के देश का प्रधानमंत्री बनने के दावे को बौद्धिक तिरस्कार से ही संबोधित कर रहे थे : 'एक अभी इस लायक नहीं और दूसरा कभी संभव नहीं'। अब वे मोदी की कसाइयत को हजम करने में किसी शोध का हवाला देने की जरूरत महसूस नहीं करते। उल्टे, दूसरे पालाबदल राजनीतिक दलालों की तर्ज पर, मोदी को विकास-पुरुष कहते अकबर भी एक ऐसे ही घटिया अवसरबाज ही नजर आते हैं जो व्यक्तिगत स्वार्थ पूरा करने के लिए अपने समुदाय की भावनाओं का सौदा करने को आतुर है।

कहते हैं नया मुल्ला ज्यादा ऊंची बांग देता है। अकबर ने हाल में दिवंगत हुए अपने पत्रकारिता पेशे के गुरु खुशवंत सिंह को भावभरी श्रद्धांजलि अर्पित की। इसमे भी उनकी भाजपा भक्ति नहीं छुपती7 उन्होंने सुविधापरस्त खुशवंत के बदनाम आपातकाल (1975-1977) के समर्थन को तो कोसा पर अपने निशाने पर सिर्फ इंदिरा गांधी को रखा; उस दौर के बदनाम खलनायक संजय गांधी या उनकी पत्नी और अब अरसे से भाजपाई सांसद मेनका गांधी से खुशवंत की खुशामदी मित्रता की जरा भी खोज-खबर नहीं ली। अकबर ने खुशवंत के प्रति अपनी व्यक्तिगत कृतज्ञता के चलते ही यह जिक्र भी नहीं किया कि खुशवंत ने समय-समय पर अपने उन पिता सर सोभा सिंह का महिमामंडन किया है जो शहीद भगत सिंह और बटुकेश्वर दत्त को सजा दिलाने के लिए 1928 के एसेम्बली बम-काण्ड में ब्रिटिश पुलिस के झूठे गवाह बने थे।

क्या अपनी आभा से चोरों को शराफत का नकाब ओढ़े रखने में सहायता करनेवाले स्वयं चोरों से कम होते हैं?

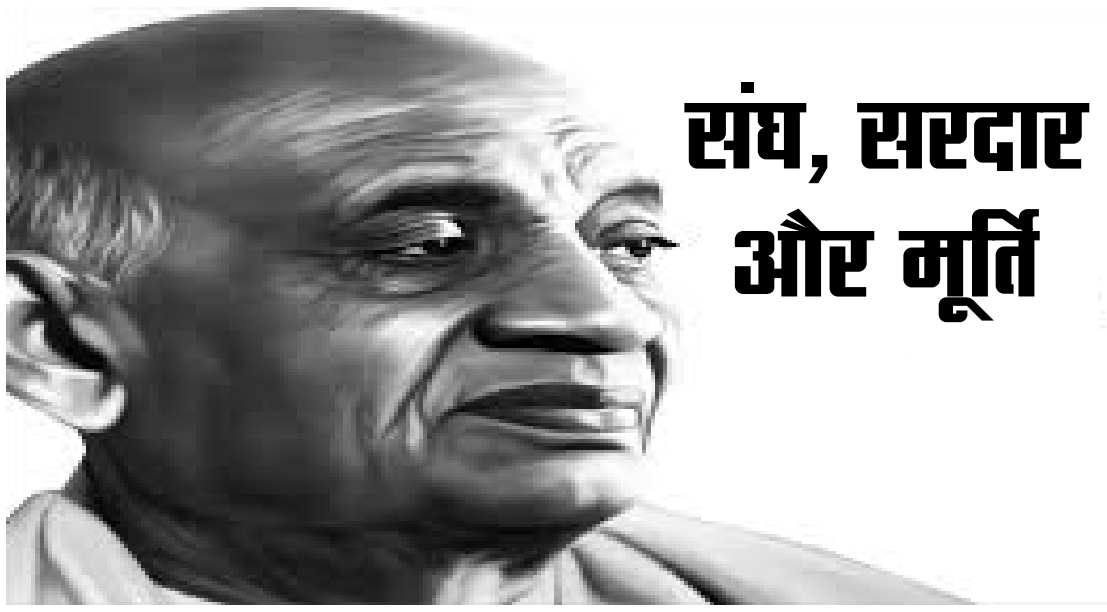

संघ, सरदार और मूर्ति

भाजपा नेताओं ने लौह पुरुष बनने की ललक बड़ी पुरानी है। पहले आडवाणी के साथ यह विशेषण जोड़ा गया और अब प्रधानमंत्री बनने के लिये लालायित नरेन्द्र मोदी ने पटेल को संघी साबित करने और खुद को लौह पुरुष बताने का बीड़ा उठाया है। देशभर से लोहा इकट्ठा करके दो विदेशी कम्पनियों को उनकी विराट मूर्ति बनाने का ठेका दिया गया है। सरदार पटेल बनाम नेहरु की धर्मनिरपेक्षता का धुआं छोड़ते हुए पटेल के व्यक्तित्व और विचारों में कतर ब्योंत करते हुए उसे संघ के अनुरुप ढालना दरअसल उन्हें बौना बना देना है। खुद सरदार पटेल के मुंह से सुनें कि उनकी धर्मनिरपेक्षता क्या इतनी गयी-गुजरी थी, जो मोदी के माफ़िक बैठे-

* फ़रवरी 1948 में महारौली की सभा में सरदार पटेल ने कहा था कि साम्प्रदायिक दंगों से वे शर्मसार हैं। हिन्दुओं को चाहिए कि वे मुसलमानों को इस देश में असुरक्षित न होने दें।

* गांधी की हत्या से 15 दिन पहले मुम्बई में उन्होंने कहा था कि यहां कुछ लोग मुस्लिम विरोध के नारे लगा रहे हैं। ऐसे वहशी इरादे वाले क्रोधियों से पागल ज़्यादा अच्छे हैं जिनका इलाज तो किया जा सकता है।

* 1947 में हैदराबाद की एक सभा में उन्होंने हिन्दू-मुस्लिम एकता की पुरजोर वकालत की थी। उनका कहना था कि भारत जैसे धर्मनिरपेक्ष देश में हिन्दू और मुसलमान के संवैधानिक अधिकारों में कोई फ़र्क नहीं है।

* जयपुर में उन्होंने कहा था कि संघ की लाठियों से मुट्ठीभर मुसलमानों के सिर तोड़ देने से देश की प्रगति नहीं होती। यदि नौजवान संघ के अनुयायी हो जायेंगे तो वह देश की कुसेवा होगी।

* मद्रास की सभा में कहा था कि संघ इस देश में जबरिया हिन्दू राज्य अथवा हिन्दू संस्कृति को थोपना चाहता है। उसे कोई सरकार बर्दास्त नहीं करेगी। उन्होंने आरएसएस को यह झिड़की भी दी थी कि वह अपने कार्यक्रम को बदलें। गोपनीयता को तिलांजलि दें। साम्प्रदायिक संघर्ष से हटें। संविधान का सम्मान करें और राष्ट्रध्वज के प्रति निष्ठा प्रदर्शित करे। कहना कुछ और, करना कुछ और की शैली उसे छोड़नी होगी।

यही थी सरदार पटेल की धर्मनिरपेक्षता। इन विचारों को लोहे की मृत मूर्ति में बदलना सरदार पटेल के व्यक्तित्व को बौना करके उसे अपनी साम्प्रदायिक फ़ासीवादी राजनीति की सेवा में लगाने की साजिश नहीं, तो भला क्या है?

(संदर्भ : 2 नवम्बर 2013 को जनसत्ता में प्रकाशित कनक तिवारी का लेख-'संघ से निस्संग सरदार')